International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 11 No. 3 Jan-Feb 2024

आदिवासी समाज मे सामाजिक परिवर्तन एवं विकास के विविध पक्षों का मूल्यांकन

डॉ. रमेश प्रसाद कोल
सहायक प्राध्यापक, राजनीतिशास्त्र विभाग, शासकीय रणविजय प्रताप सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
जिला उमरिया, म. प्र. भारत
Corresponding Author – डॉ. रमेश प्रसाद कोल
Email: dr.rameshprasadkol@gmail.com
DOI-10.5281/zenodo.10726824

शोध सारांश

आदिवासी समाज वह समूह हैं जो सभ्यता काल के जीवन प्रतिमानों से संबंधित है तथा अशिक्षित और कथित सभ्यता से दूर हैं। आदिवासी समाज की अपनी विशिष्ट पहचान होती है, ये प्राचीन आदिवासी समाज आर्थिक और सामाजिक जीवन के वे प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं जो गिरि जंगलों, पर्वतों, पठारो आदि निर्जन क्षेत्रो में निवास करने तथा विशिष्ट सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक जीवन के विकास के कारण अन्य समाजों की तुलना मे अनेक विभिन्नताओं से युक्त है। वास्तव मे आदिवासियों का रहन सहन, उनका नृत्य संगीत उनकी सामाजिक व्यवस्था, उनका अर्थतंत्र, उनकी संस्कृति सब कुछ प्रकृति के साथ तालमले से संचालित होता है अतः इनकी समस्याओं के समाधान के लिए इस बात को ध्यान मे रखकर प्रयास आवश्यक हैं। आवश्यकता आज इस बात की भी है कि सरकार, राजनेता, बुद्धिजीवी और अकादमिशियन पूरे देश में आदिवासियो की सभी समस्याओं के नए सिरे से रेखांकित कर उनका समाधान निकाले अन्यथा गरीबी, शाषण अन्याय धर्मान्तरण, नक्सलवाद और अलग राज्य की मांग जैसी चुनौतियाँ नित नए रूप में प्रकट होती रहेंगी और ये सभी विकास के नाम पर अंधी गलियों मे भटकते रहेंगे।

Keywords: आदिवासी समाज,ऐतिहासिक उत्पत्ति ,विस्तार,सामाजिक परिवर्तन एवं विकास।

वर्तमान सदी मे आदिवासी समाज

वर्तमान सदी मे आदिवासी समाज की उत्पत्ति को लेकर अनेक विमर्श सामने आये हैं। आदिवासी शब्द सामान्यतः उन लोगों के जीवनयापन की शैली के लिए रूढ़ हो गया है, जो वैदिक काल में 'अनार्य' या 'दस्यु' कहलाते थे। इन्हें ही विकसित लोगों ने आदिवासी, जनजाति, आदिमजाति, वन्यजाति, वनवासी इत्यादि नाम दिया। संस्कृत ग्रन्थों में भी 'अत्विका' या 'वनवासी' कहा गया है। जबकि गाँधी जी इन्हें 'गिरिजन' कहा करते थे। प्राचीन ग्रन्थों में आदिवासी ही भील, कोल, किरात, निषाद इत्यादि नामो से जाने जाते हैं। भारतीय इतिहास में यहाँ के निवासियों को अपने से अलग करने हेतु उन्हें ''नेटिव'' या ''ट्राइब'' की संज्ञा दे दी। इसी 'दूसरे लोगों को जनजाति या TRIBE के रूप मे मान्यता मिली है। शाब्दिक अर्थ में आदिवासी शब्द दो शब्दों 'आदि' और 'वासी' से मिलकर बना है, जिसका मूल अर्थ है–निवासी। अन्तरार्ष्ट्रीय स्तर पर इसे भारत और समीपवर्ती देश में निवास करने वाले 'प्रथम देशी निवासियों' के रूप में स्मरण किया जाता है, जिनकी व्याप्ति 'इण्डो–आयर्न इमिग्रेशन्स' से होती है। सभ्यता निर्माताओ ने अंग्रेजी शब्द 'ट्राइब' के मूल लैटिन शब्द 'ट्राइबस' के रूप मे व्यक्त किया है, जिसका प्रयोग रोमन राज्य में मूल त्रिपक्षीय विभाजन के लिए होता है। अनेक नृ–वैज्ञानिकों ने इसका प्रयोग 'कुटुंब' के रूप में किया है। समाजशास्त्री चिंतक रंजीत जी ने आदिवासी उत्पत्ति के प्रश्न को ग्रीस से जाड़ेकर आदिवासियों की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का प्रयास किया है, क्योकि दुनिया में लाकेतंत्र का पहला फूल सैन्य आविष्कारों के साये में ग्रीस में खिला। हथियारों का विनिर्माण काफी आधुनिक हो चला था। अब राज्यों के पास छोटी फौजी टुकड़ियो की जगह बड़ी सेनाओ को हथियारों से लैस करने की तकनीक आ चुकी थी। एक बार में हमला करने वाले पुराने जमाने के लड़ाकुओं की जगह राज्यों ने अब भारी–भरकम हथियारों से सम्पन्न सैन्य बलों को तैनात करना शुरू कर दिया था। कोई भी व्यक्ति, चाहे वह भ–ूस्वामी हो या किसान, जो खुद को इन हथियारों (होपला) से लैस करने की क्षमता रखता था। इस नई सेना ने एक नए किस्म की समानता को जन्म दिया। होपला से लड़े जाने वाले युद्ध की खासियत कंधे से कंधा मिलाकर एवं सटकर खडे होने वाले आठ फौजियो की एक कतार थी, जिसे 'फैलेंक्स' कहते थे। यह जन सेना थी, जिसमें नागरिक ही सैनिक बन चुके थे। होपला ने ग्रीस का रूपांतरण कर डाला और एक सुनियोजित तरीके से गढ़े हुए लाकेतंत्र की बुनियाद रखी। एक किसान, जो अब फैलेंक्स की कतार में राजपरिवार के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा होता था। अब राजशाही को देखने का नजरिया बदल चुका था। ई0पू0 510 में विश्व इतिहास में क्रांतिकारी परिवर्तन एथेंस पर स्पार्टा के हमले से हुआ। एक निरंकुश तानाशाह के पुत्र क्लीस्थेनीज के नेतृत्व मे एथेंस की सेना ने आक्रमणकारियों को खदेड़ दिया ओर उसे सिटी मजिस्ट्रेट बना दिया। इसके साथ क्लीस्थेनीज ने अनगिनत पारंपरिक जनजातियों को

समाप्त करके सभी को दस इकाइयो ं का सदस्य बना दिया और इस तरह एक जनजातीय शहर राज्य का रूप ले सका, जो धीरे–धीरे भमूध्यसागर के पूर्वी तट की सबसे समृद्ध सैन्य, वाणिज्यिक, कलात्मक और बौद्धिक ताकत बनकर उभरा। तकरीबन ऐसे ही सुधारों ने 2000 साल बाद भीतरी एशिया में मंगोलों के लिए कहीं ज्यादा चौंकाने वाले नतीजे दिये। लोगों की विधायी परिषद के सदस्यों का चयन हर साल मध्यवर्ग के बीच में से होता था और एक व्यक्ति अपने जीवन काल में सिर्फ दो बार ही इस पद पर रहता था। इस तरह एक ही समय में अधिकतर किसान, शिल्पकार और व्यापारी परिषद के सदस्य होते और अन्ततः उनके नागरिक होने की परिभाषा में बिल्कुल नया और सार्थक आयाम जुड़ गया था। 2 राजनैतिक रूप से लोकतंत्र का युगान्तकारी रूप स्थापित करने वाला कोई और नहीं अपितु एथेंस के आदिवासी ही थे, यह घटना आज से लगभग 2500 सदी से भी पहले की है। आदिवासी एक ही सांस्कृतिक श्रृंखला का मानव समूह है, जो एक ही भू–खडं पर रहता है, एक भाषा–भाषी है तथा एक ही प्रकार की परंपराओं एव ंसंस्थानो ंका पालन करता है और एक ही सरकार के प्रति उत्तरदायी होता है।'' जार्ज पीटर मर्डाक और डब्ल्यू0एच0आर0रिवर्स के अनुसार, ''जनजाति एक सरल पक्र ार का सामाजिक समूह है जिसकी सामान्य भाषा है तथा जो युद्ध जैसी विपत्तियों का संगठित रूप से सामना करती है। इसी प्रकार फ्रेंच बोआस (आर्थिक रूप से स्वतंत्र), गिलिन और गिलिन (सामान्य संस्कृति), डी0एन0 मजूमदार (परिवारों का संकलन) आदि विद्वानो ं ने अपने–अपने मत–मतातंरों द्वारा आदिवासियों को पारिभाषित करने का पय्रास किया है। इम्पीरियल गजेटियर के अनुसार, ''जनजाति ऐसे परिवारो ंका संकलन है जिसका एक सामान्य नाम है, सामान्य भाषा है तथा जो सामान्य भू–भाग में बसे हुए है अथवा उसमे बसे होने का दावा करते है तथा वे प्रायः अन्तर्विवाही नहीं होते, चाहे पहले ऐसी प्रथा उनमे ं पायी जाती रही हों।

उद्वेश्य

आज आदिवासी समाज के अध्ययन के मुख्य तीन उद्वेश्य दिखाई पड़ते हैं। एल.पी. विद्यार्थी के अनुसार में है – (1) उपनिवेशवादी प्रशासन (2) धर्म परिवर्तन के ऐतिहासिक अध्ययन (3) साहसी संस्मरण। इन उद्वेश्यों के अन्तर्गत किये गय ेअध्ययनों में एक विकसित मानव समूह में दूसरे अविकसित या पिछडे मानव समूह को अपने सें हटकर देखने की स्वाभाविक प्रकृति दिखाई पड़ती है। व्यावहारिक संदर्भ में आदिवासी समाज की स्वाभाविक लोक प्रवृत्ति के बदलाव को आदिवासी विकास के रूप में चित्रित किया गया। इस वर्ग की विकास के प्रति प्रतिबद्धता को वैचारिक स्तर पर प्रख्यात राजनेता गोविदं वल्लभ पंत के विचारो ं में देखा जा सकता है। उनके अनुसार भारत एक विशाल देश है जहाँ धरातलीय एवं संस्कृति में विविधता पायी जाती है। वहाँ आदिवासी समाज का महत्वपूर्ण स्थान है। ये ईश्वर की ऐसी अनुपम कृति है जिसने अपनी जीवन शैली स्वयं विकसित की है। उनके जीवन की खुशियाँ उनके लाके गीत, नृत्य की सतरंगी दुनियाँ में दिखाई देती है। इन आदिवासी समाज में सत्य के प्रति प्रेम, जीवन के प्रति लगाव, आत्मविश्वास सर्वत्र दिखाई देता है। ये सच्चे अर्थो में भूमिपुत्र है जों प्रशसां के पात्र है, इन जनजातियो ंको पिछड़ा या असभ्य कहना उचित नहीं है। इनसे गैर जनजातियों एव ंअन्य लोगों को शिक्षा लेनी चाहिये'' आदिवासी समाज के महत्व को सैद्धान्तिक स्तर पर स्वीकार करते हुये स्वाधीनता के पश्चात स्वतंत्र भारत की विधायिका, केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों ने आदिवासी समाज के विकास एवं उनके संरक्षण के लिये महत्वपूर्ण प्रयास किये हैं। आदिवासी समाज को अपनी संस्कृति को बनाये रखने तथा सामाजिक आर्थिक स्थिति को उच्च स्तर पर लाने के लिये भारतीय संविधान में अनेक धारायें सम्मिलित की गयी हैं। संविधान के अनुच्छेद 342 खण्ड। में घोषित किया गया है कि राष्ट्रपति सार्वजनिक सूचना द्वारा आदिवासी समुदायो ंके भीतरी समूहों की घाषणा करेगें। इस सूचना में जो जनजाति या जनजातियो ंके भीतरी समूह परिगणित किये जायेंगें वे अनुसूचित जनजाति कहलायेगें। वर्तमान मे ंइस प्रक्रिया में 550 जनजातियों को अनुसूचित जनजाति में सूचीबद्ध किया जा चुका है। इनमें मुख्य संवैधानिक संरक्षण के बिन्दु हैं– (1) अस्पृश्यता का पूर्णतः उन्मूलन (अनुच्छेद–17) (2) जनजातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितो ंकी रक्षा करना और उनका सभी प्रकार के शाषेण तथा सामाजिक अन्याय से बचाव करना (अनुच्छेद–46) (3) उनके लिये हिन्दुओं के सार्वजनिक एव ंधार्मिक संस्थानो ंके द्वार खालेना (अनुच्छेद 25ख) (4) सार्वजनिक समागम के स्थानों के बारे में किसी भी पक्रार की दायित्व या प्रतिबंधो की शर्तों को हटाना (अनुच्छेद–192) (5) किसी भी अनुसूचित जनजाति के हित में सभी नागरिकों को स्वतंत्रता पूर्वक आने जाने बसने, सम्पत्ति अर्जित करने के सामान्य अधिकारों में कानून द्वारा कटौती करने की व्यवस्था (अनुच्छेद–115) (6) राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि द्वारा सहायता करने वाली किसी भी शिक्षा संस्था में प्रवेश पर किसी भी तरह के प्रतिबंध का निषेध करना अनुच्छेद–29(2), (7) राज्यों को पिछड़े वर्गों के लिये उन सरकारी सेवाओं में जहाँ उनका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है, आरक्षण करने का अधिकार देना तथा राज्यों से यह अपेक्षित है कि वह सरकारी सेवाओं में नियुक्ति के मामले में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का ध्यान रखे (अनुच्छेद–26 तथा 335) (8) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में विशेष प्रतिनिधित्व देना (अनुच्छेद–330,332,334) (9) अनुसूचित जाति तथा के प्रशासन और नियंत्रण के लिये विशेष उपबन्ध बनाना। (अनुच्छेद–244, पंचम/षष्टम अनुसूची) (10) अनुसचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण तथा हितों की रक्षा के लिये राज्यों में सलाहकार परिषदो

तथा पृथक विभागों की स्थापना करना एवं केन्द्र मे एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति करना (अनुच्देद–164 एव 338) (11) मानव का देह व्यापार एवं जबरदस्ती मजदूरी कराने का निषेध करना। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों को जनजातीय कल्याण को बढ़ावा देने एवं उनके लिये धनराशि देने की अनुच्छेद–275 में व्यवस्था की गयी। अनुच्छेद–328 में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिये एक कमिश्नर नियुक्ति करने का प्रावधान है, जिसकी रिपोर्ट संसद में रखी जाती है। स्वाधीनता के पश्चात देश में तीव्रगति से आर्थिक विकास प्राप्त करने के लिये पंचवर्षीय योजनाओं को चलाने का निर्णय लिया गया। दीर्घकाल में इन योजनाओं का उद्वेश्य आम जनता के जीवन स्तर को उन्नत करने के लिये उत्पादन में वृद्धि करना तथा धन के समान वितरण को संभव बनाना था। इन उदेश्यों की प्राप्ति के लिये देश के अनुसूचित जनजाति संवर्ग के निम्न स्तर को उच्च करने के लिये पूरे आयाजेन काल में सरकार प्रयत्नशील दिखाई देती हैं। प्रथम पंचवर्षीय याजेनाकाल में ही जनजातीय क्षेत्रों के विकास के लिये विशिष्ट बहुउदेद्शीय जनजातीय विकास परियोजनायें बनायी गयीं। इन परियोजनाओं में विशिष्ट रणनीति की आवश्यकता को स्वीकार नहीं किया गया। आदिवासी क्षत्रो के लिये अधिक धनराशि की व्यवस्था की गयी। आदिवासी कल्याण केन्द्रों की स्थापना की गयी। इनमें प्राथमिक शाला, मिडिल स्कूल, कुटीर उद्योगों के प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये। देश के कतिपय हिस्सों में जनजातीय भाग में स्वास्थ्य, पेयजल, सड़कों की सुविधाओं में वृद्धि की गयी। भूमिहीनों के पुर्नवास तथा बहुउद्वेशीय सहकारी समितियों की स्थापना के प्रयास भी किये गये। तृतीय पंचवर्षीय योजनायें जनजातीय विकास खण्डों की स्थापना की गयी। इस योजना में कृषि के विकास, प्रशिक्षण, शैक्षणिक, स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रसार तथा पयेजल उपलब्ध कराने की दिशा में व्यापक कार्य प्रारंभ किये गये। पाचंवी पंचवर्षीय याजेना में जनजातीय विकास कार्यो की समीक्षा में पाया गया कि आदिवासी अज्ञानता और असुरक्षा के कारण याजेनाओं के लाभ से वंचित है। इस क्रम में विकास को समग्र रूप में देखते हुये आदिवासी उपयोजना की अवधारणा रखी गयी। 50 प्रतिशत से अधिक आबादी वाले जनजातीय क्षेत्रों में विकासखण्डों को सूक्ष्म इकाई मानकर एकीकृत विकास की कई स्तरो पर योजनाओं का निर्माण किया गया। इस उपयाजेना मे स्थानीय समस्याओं, स्थानीय संसाधनों पर ध्यान केन्द्रित करते हुये परिस्थितियों के अनुसार 'उपयोजना क्षेत्र के लिये कायर्क्रम बनाये गये। यह माना गया कि सामान्य क्षेत्रों के विकास की अवधारणा जनजातीय क्षेत्रों के लिये हानिप्रद हो सकती है। अतः योजना आयागे ने 'उपयोजना क्षेत्रो के लिये विकास की योजनाओं सरलतम ढंग से प्रस्तुत करने के दिशा निर्देश दिया तथा सरकारी, अर्द्धसरकारी संस्थाओं, साख और वित्तीय संस्थाओं को एकीकृत कर दिया। प्रोजेक्ट क्षेत्र की समस्याओं एवं संभावनाओं के अनुसार देश में लागू किये गये कायक्रमों का मुख्य उद्देश्य जनजातियों को गैर आदिवासियों के शोषण से बचाना, उनमे चतेना जागृत करने तथा द्रुत गति से विकास करने के लक्ष्य रखे गये पाँचवी एवं छठी पंचवर्षीय योजनाओं में ऊर्जा, संचार, परिवहन, परिस्करण भण्डारण विपणन सुविधाओं के प्रोजेक्ट क्षेत्रों में विस्तार की नीति अपनाई गयी। इन क्षेत्रों में जनजातीय परिवारों की आर्थिक दशा सुधारने के लिये वानिकी कार्यों में प्रशिक्षण कायर्क्रम भी प्रारंभ किये गये 'शिक्षा' एवं 'स्वास्थ्य' सुविधाओं में विस्तार के साथ सरकारों ने अन्त्योदय योजनायें भी प्रारंभ की। अकेले मध्यप्रदशे 1990 में 13 अन्त्यादेय याजेनाओं को प्रारभं करने का उल्लेख मिलता है। सातवीं पंचवर्षीय याजेना मे जनजाति उपयाजेना के लिये विविध कार्यक्रम प्रारंभ किये गये। इस काल में जनजातियो के शोषण को राकेने के लिये विशेष अभियान भी प्रारंभ किये गये। जनजातीय क्षेत्रो में पर्यावरण सुधार के कायर्क्रम भी प्रारंभ हुये। नौंवी पंचवर्षीय याजेना मे नीतिगत रूप से गरीबी निवारण, समाज के निम्न वर्गो पर विशेष ध्यान देते हुये खाद्य एव पाेषाहार सुरक्षा, गरीबों के लिये सुरक्षित पयेजल, प्राथमिक स्वास्थ्य उपलब्धता, सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा, आवास की व्यवस्था के कायर्क्रमों को सरकार ने प्रारंभ किया। इसके अतिरिक्त इस योजना काल में जनभागीदारी, पंचायती राज्य संस्थाओ एव स्वयं सेवी संस्थाओ को प्रोत्साहित किया गया। सरकार का लक्ष्य महिलाओं एव कमजोर सामाजिक वर्गो का सामाजिक आर्थिक उत्थान का था जिससे वे अधिक साधन सम्पन्न बन सके। अन उदे्श्यों के अनुरूप जनजातीय क्षेत्रों में निर्धनता उन्मूलन एवं रोजगार वृद्धि के व्यापक कार्यक्रम अस्तित्व में आये। इन क्षत्रो में बुनियादी सुविधाओं का तेजी से विस्तार हुआ 'खाद्य एवं पाेषाहार सुरक्षा' के इन क्षेत्रो में व्यापक अभियान दिखाई पड़ते हैं। दसवीं पंचवर्षीय एवं ग्यारहवीं पंचवर्षीय याजेनाओ में भी इसी के अनुरूप जनजाति विकास को प्राथमिकता दी गयी। यहाँ महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण राजेगार गारंटी याजेना–2005 का उल्लेख करना आवश्यक होगा। इस याजेना के अंतर्गत ग्रामीण परिवार के वयस्क सदस्यों को वर्ष में 100 दिन के रोजगार की गारंटी दी गयी। योजना में ग्रामीण परिसम्पत्तियों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया। ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क निर्माण, जलसंरक्षण, वृक्षारोपण एव भूमिविकास के कार्यक्रम प्रारंभ किये गये। योजना की रिपोर्ट 2006–07 से स्पष्ट है कि इस वर्ष रोजगार सृजन राष्ट्रीय स्तर में अनुसूचित जनजातियों की भागीदारी 36.38 प्रतिशत रही है। वर्ष 2008–09 में भी याजेना के व्यापक विस्तार होने पर भी अनुसूचित जनजाति की भागीदारी 33 प्रतिशत से अधिक है। यह एक सामाजिक अर्न्तवेशंन की योजना है क्योंकि इसमें महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति की भागीदारी अधिक रही हैं। आयोजन काल में सरकार ने उपरोक्त कार्यक्रमों के अतिरिक्त जनजातीय लोगों के उत्थान के लिये कुछ विशेष कार्य भी किये है। ये है –

(1) पूर्वोत्तर राज्य सरकारों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों को जनजातीय योजनाओ के अन्तगर्त विशेष केन्द्रीय सहायता उपलब्ध करायी गयी है। (2) अनुसूचित जनजातियों को रियायती दर पर धनराशि उपलब्ध कराने के लिये वित्तीय विकास निगम का केन्द्र सरकार ने गठन किया है। (3) आदिवासियो को उचित कीमत दिलाने के लिये सन् 1987 ई0 में जनजातीय सहकारी विपणन विकास परिसंघ की स्थापना की गयी है। (4) अनुसूचित जनजातियों पर होने वाले अत्याचारों को रोकने के लिये 65वें संविधान संशोधन द्वारा राष्ट्रीय अनुसूचित आयागे की स्थापना की गयी है। इस आयागे को यह भी देखना है कि सरकारों द्वारा आदिवासी विकास की नीतियो का क्रियान्वयन सही ढंग से हो रहा है या नही। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से आदिवासी जीवन के विविध पथों को विकास से जाड़ेने के लिये सरकारी प्रयास सार्थक दिखाई देते हैं। किन्तु इस संदर्भ में म.प्र. शासन द्वारा आदिवासी–अनुसूचित जाति कल्याण कार्यक्रमों की समीक्षा के लिये गठित समिति की रिपोर्ट का ये अंश महत्वपर्णू है–'' आदिवासी एव अनुसूचित जाति कल्याण कायर्क्रमो का कालान्तर में आवश्यकताओं के अनुरूप संशोधन होता रहा है। प्रायः देखने में यह आया है कि इन वर्गो की कल्याण की उपर्युक्त व्यूहरचना तथा तत्संबधी योजनायें तो बहुत अच्छी है आरै उनका परिणाम निश्चित रूप से इन वर्गों के सामाजिक आर्थिक उत्थान में सहायक होना चाहिये। किन्तु कार्यान्वयन की जो प्रक्रिया एवं प्रणाली है, वह दोषपूर्ण है। यही कारण है कि शासन की योजनाओ एव घाषेणाओं के अनुरूप प्रतिफल इन वर्गों तक नहीं पहुँच पाये है।'' ब्रह्मदेव शर्मा ने अपनी पुस्तक आदिवासी विकास में सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों दृष्टिकोणों से विचार व्यक्त किया है कि वस्तुतः आदिवासी संवर्ग की समस्याओं की प्रकृति भिन्न है। इसका कारण सामाजिक आर्थिक विकास के स्तरों पर भिन्नता है। कुछ जनजातियाँ बाह्य सांस्कृतिक संपर्को से अप्रभावित रही है। दूसरी ओर कुछ जनजातीय बाह्य संपर्को से बहुत प्रभावित है। बाह्य संपर्को में शासकीय अधिकारी कर्मचारी और व्यवसायी हैं ये अपने को श्रेष्ठ तथा आदिवासी को आज भी असभ्य और जंगली मानते है। ये आदिवासियों की संस्कृति आरै समाज व्यवस्था, धार्मिक आस्थाओं और विधि विधान परम्पराओं का अंतिरंजित एकांगी और भ्रामक चित्र प्रस्तुत करते हैं। इनके क्रियाकलापों से आदिवासी कला साहित्य, नृत्य संगीत के भविष्य पर संकट उठ खड़ा हुआ है। आदिवासी समाज भी इस वर्ग के साथ अपना संबंध नहीं बना पा रहा है, इससे आदिवासी विकास को धक्का लगा है। सरकारी प्रयासों के बाद आदिवासी विकास के तत्वो पर दृष्टि डाली जाये तो आज भी निम्नलिखित समस्याओं के व्यावहारिक हल की आवश्यकता दिखाई पड़ती है। ये तत्व है– (1) जनजातीय क्षेत्रों में निर्धनता का स्तर (2) भूमि विस्थापन की समस्या (3) बधुआ मजदूरी की समस्या (4) ऋणग्रस्तता (5) वनों के परम्परागत अधिकारों के अपरदन की समस्या (6) संगठित आर्थिक गतिविधियों के प्रसार से उत्पन्न आदिवासी क्षेत्रों में असंतुलन की समस्या (7) जीवन की गुणवत्ता का प्रश्न (8) स्वास्थ्य की समस्या (9) शिक्षा की समस्या। स्वाधीनता के पश्चात इन समस्याओं के प्रति सरकारी प्रयासों के बाद भी अल्प परिणामों की वजह व्यवहारिक रणनीति का अभाव एवं गैर जनजातीय लोगों द्वारा आदिवासियो के आर्थिक शाषेण की प्रवृत्ति है। यद्यपि शिक्षा के प्रचार प्रसार से उनकी स्थिति में सुधार दृष्टिगत हो रहा था पर इसके पीछे उनका निःस्वार्थ भाव हित नहीं छिपा था। धर्मान्तरण का इतिहास यदि देखा जाए तो शुरूआत अशोक के काल से कही जा सकती है जब बौद्ध धर्म को अस्पृश्यता निवारक धर्म के रूप मे माना जाने लगता है। ईसाई द्वारा तटीय इलाकों और दीव मे फ्रासिस जेवियर के आने के साथ मछुआरो का सांस्कृतिक परिवर्तन होता है।' आलाचेक मैनेजर पांडे इनकी आदिम स्थितियो के समाप्त होने की संभावना से इंकार करते है वे लिखते हैं– 'आदिवासी समाजो में अब भी आदम स्थितियाँ हैं तो ग्रामीण जीवन में मध्य युगीनता, छोटे बडे शहरों में आधुनिकता दिखाई देती है तो दिल्ली और मुम्बई जैसे महानगरों में उत्तर आधुनिकता। 'अंधविश्वास, रूढियाँ, व कर्मकांड की श्रृंखलाओं को ताडे कर इन समूहों को उन्नत अवस्था मे पहुँचाने वाले व्यक्तियो में 'बिरसा मुंडा' का प्रमुख स्थान है रामशरण जाशेी लिखते हैं– ''उन्होंने अपने समाज का निरंतर रूपांतरण किया, उन्नत से उन्नतर चतेना अवस्था में। इतना सही नही ,उसने हताशा से घिरे आदिवासियो में मुक्ति और स्वराज के सपने बाऐ।'' स्वराज के सपने बाने वाले बिरसा यद्यपि ईसाई स्कूल मे शिक्षित थे, परन्तु अपने आदांलेन मे चर्च के बाधक लगने पर उन्हाने उसका भी विरोघ किया, आज धर्म के वर्चस्ववादी समाज में आदिवासी अस्मिता का संकट व्याप्त है कर्मशील आदिवासी धर्म की राजनीति की बिसात पर मोहरे बने हैं। यहाँ राजेन्द्र यादव का कथन दशनीय है–''सत्ता स्वयं वर्चस्ववादी होती है। धर्म और संस्कृति उसके मुखौटे हैं। सत्ता की होड, धर्म को बंदर की तरह नचाती है। मगर जैसे ही धर्म,सत्ता पर हावी होता है, वह कहर बरपा करने लगता है।'' यही मुखौटा लगाकर झारखंड जैसे आदिवासी बहुल राजनैतिक गठबंधन सरकार चला रहे हैं। राजेन्द्र यादव मानते हैं कि–''धर्म के सामती वर्चस्व को लोकतंत्र अर्थात जातियो का उभार ही तोड सकता है लेकिन ये वे वर्ग हैं जिन्हे हाशिये से बाहर रखा गया और जिनकी जुबान पर ताले जड़ दिये गए हैं।''

निष्कर्ष :

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सभ्यता के सम्यक विकास के लिए शिष्ट एवं लोक का सामजंस्य आवश्यक है। सम्प्रति धर्म एव राजनीति के कारण ही आदिवासी जातियाँ अपनी अस्मिता व अस्तित्व के संकट से जूझने के लिए अभिशप्त हैं। इस अभिशाप से उन्हे मुक्त कराने के ठोस प्रयासो की उन्हे अभी भी प्रतीक्षा है।

सन्दर्भ–ग्रंथ

1. समयातंर मासिक पत्रिका–संपादक, पंकज विष्ट, 79–ए, दिलशाद गार्डेन, नई दिल्ली, अकं : अगस्त 2010,
2. रमणिका गुप्ता–आदिवासी : साहित्य यात्रा, रमणिका फाउंडेशन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, पहला संस्करण : 2008
3. बहुवचन, अंक 25, अ0–जू0, 2010, सं0–राजेन्द्र कुमार, म0गा0अ0हिं0वि0वि0, वर्धा प्रकाशन
4. लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'–भारतीय संस्कृति कोश, राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली, पहला संशोधित संस्करण : 1996
5. रमणिका गुप्ता–आदिवासी कौन?, रमणिका फाउंडेशन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली, पहला संस्करण : 2008
6. लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'–भारतीय संस्कृति कोश, राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली, पहला संशोधित संस्करण : 1996
7. उपाध्याय विजय शकं र, वर्मा विजय प्रकाश–भारत की जनजातीय संस्कृति, मध्य प्रदशे हिन्दी ग्रंथ अकादमी,पंचम आवृत्ति : 1998
8. भारतीय इतिहास के कुछ भाग–भाग–1, एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2007